मोहम्मद यासीन

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

17 जुलाई, 2007

[डॉ. अरिजीत पसायत एवं पी. पी. नौलेकर, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 482 - अपीलार्थी को खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 के तहत दोषसिद्ध किया गया - अपीलीय न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि को यथावत रखा गया-पुनरीक्षण याचिका खारिज की गयी-याचिका पर उस आदेश को धारा 482 के तहत वापस लिया गया-उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक बार गुणावगुण के आधार पर अपील का निर्णय हो जाने के बाद, उसमें धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा - अभिनिर्धारित किया गयाः उच्च न्यायालय का यह मानना सही है कि धारा 482 के तहत आवेदन खारिज किया जाना चाहिए।

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954-धारा 20 ए. ए.- भोजन में मिलावट-अभियुक्त ने घटना की तारीख पर 18 वर्ष की आयु का होने का मुद्दा उठाया अैार परिवीक्षा की मांग की -प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की आयु से संबंधित प्रश्न पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया-

अभिनिर्धारित किया गया, मुद्दा महत्वपूर्ण था-अतः मामला उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया।

अपीलार्थी को खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 की धारा 7/16 के तहत दोषसिद्ध किया गया तथा एक वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। उन्होंने याचिका दायर की लेकिन उसे खारिज कर दिया गया। तत्पश्चात उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गयी पुनरीक्षण याचिका भी खारिज की गयी। याचिका पर उस आदेश को धारा 482 के तहत वापस लिया गया- उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक बार गुणावगुण के आधार पर अपील का निर्णय हो जाने के बाद, उसमें धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा ।

न्यायालय में की गई अपीलों में यह तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की है कि धारा 482 दंड प्रकिया संहिता की कोई भूमिका नहीं थी और इसके अलावा अपीलार्थी की आयु घटना की तारीख को 18 वर्ष से कम थी, अधिनियम की धारा 20 ए.ए. लागू थी और परिवीक्षा दी जानी चाहिए थी।

अपीलों का निपटारा करते हुए, अभिनिर्धारित किया गयाः

1. उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक बार गुणावगुण के आधार पर अपील का निर्णय हो जाने के बाद, उसमें धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा।

उच्च न्यायालय ने इसे सही माना कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आवेदन खारिज किया जाना चाहिए [पैरा 5 और 9] [382-एफ, जी; 383-एफ]

उड़ीसा राज्य बनाम राम चंदर अग्रवाल, ए.आइ.आर (1979) एससी 87 और हरि सिंह मान बनाम हरभजन सिंह बाजवा और अन्य, जे. टी. (2000) सप्लीमेंट 2 एस. सी. 394 पर निर्भर था।

2. यद्यपि, यह एक ऐसा मामला है जिसमें प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की आयु से संबंधित प्रश्न पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया। यदि अपीलार्थी यह दिखाने में सफल हो जाता है कि घटना की तारीख को उसकी आयु 18 वर्ष से कम थी, तो अधिनियम की धारा 20 एए की प्रयोज्यता पर विचार किया जाना चाहिए। यह याचिका विशेष रूप से निचली अदालत के समक्ष नहीं ली गई थी और केवल कुछ दस्तावेज प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष पेश किए गए थे। निचली अदालत को इसकी जांच करने का अवसर नहीं मिला था। प्रथम अपीलीय न्यायालय को याचिका में कोई सार नहीं मिला क्योंकि दस्तावेज साबित नहीं हुए थे। चूँकि यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिसका विवाद के विषय पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है, इसलिए आयु से संबंधित याचिका की प्रयोज्यता पर विचार करने अैार कानून के अनुसार मामले को नये सिरे से तय करने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया । [पैरा 11] [384-ए, बी, सी

सिविल अपील क्षेत्राधिकार सिविल अपील सं. 1039- 2001

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आपराधिक विविध मामले में आवेदन संख्या 5720 -2000 निर्णय और आदेश दिनांक 15.12.2000 और 27.7.2000 से

संग

सीआरएल. ए. सं. 1040-2001

बी.एस. जैन, जे.पी. सिंह और सदभावी इंडीवर अपीलार्थी की ओर से

एस.डब्ल्यू. ए. कादरी और प्रदीप मिश्रा प्रतिवादी की ओर से

न्यायालय द्वारा निर्णय सुनाया गया।

डॉ. अरिजीत पासायत, जे.

1. ये दोनों अपीलें आपस में जुड़ी हुई हैं

सीआरएल सं. No.1039/2001 में आदेश को, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आपराधिक संहिता की धारा 482 के तहत दायर आवेदन को जिसे दिनांक 15.12.2000 खारिज किया गया था, आदेश से संबंधित बताते हुए चुनौती दी गयी। उक्त आवेदन 1986 के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 489 में पारित दिनांकित 27.7.2000 आदेश को वापस लेने के लिए दायर किया गया था।

उक्त आदेश सी.आर.एल.ए. No. 1040/2001 में चुनौती का विषय है तथ्यात्मक पहलुओं का एक संक्षिप्त संदर्भ पर्याप्त होगा।

2. अपीलार्थी को धारा 7/16 खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषिसद्ध किया गया एवं विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट (आर्थिक अपराध), बरेली ने अभियुक्त को दोषी पाया और दोषसिद्ध किया गया जिसका पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है तथा उसे एक साल के लिए कठोर कारावास और 2,000 /- रुपये जुर्माने की सजा सुनाई गई ।

3. प्रस्तुत अपील को विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, बरेली द्वारा खारिज कर दिया गया था।

एक पुनरीक्षण याचिका उच्च न्यायालय में दायर की गई । निर्धारित तिथि 27.7.2000 पर अपीलार्थी उपस्थित नहीं हुआ। अधिवक्ता श्री एस. ए. एन. शाह ने कहा कि उनके पास मामले को संचालित करने का कोई निर्देश नहीं है। उच्च न्यायालय ने अभिलेखों का अवलोकन किया और विद्वान सरकारी अधिवक्ता को सुनने के बाद पाया कि अपीलीय न्यायालय ने अभिलेख पर साक्ष्य के साथ विस्तार से विचार किया था और अभिलेख पर मौजूद सामग्री के अवलोकन के बाद याचिका को सही ढंग से खारिज कर दिया था । आदेश को वापस लेने के लिए एक आवेदन कथित रूप से संहिता की धारा 482 के तहत दायर किया गया था जिसमें कहा गया था कि श्री एस. ए. एन. शाह अधिकृत वकील नहीं थे। वास्तव में पुनरीक्षण याचिका श्री यू. एन. शर्मा द्वारा दायर की गई थी, जिनका नाम काॅज लिस्ट में नहीं था।

4. जब अपीलार्थी ने प्रतिनिधित्व नहीं किया गया तो उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को अपने मामले का बचाव करने हेतु एक वकील को नियुक्त करने के लिए, नोटिस भेजा लेकिन नोटिस जारी होने का कोई प्रमाण नहीं था। आगे यह माना गया कि उच्च न्यायालय ने गलती से यह मान लिया है कि संहिता की धारा 482 की कोई भूमिका नहीं है। इसके अलावा यह भी माना गया कि अपीलार्थी ने अपनी आयु का प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया था और उस संबंध में सामग्री अपीलीय न्यायालय के समक्ष रखी गयी थी लेकिन उसने उस पर विचार नहीं किया।

5. यह ध्यान देने योग्य है कि अपीलार्थी ने अपनी आयु 18 वर्ष से कम होने के बारे में प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष एक निश्चित रूख अपनाया था। अधिनियम की धारा 20 एए का संदर्भ यह तर्क देने के लिए दिया गया था कि परिवीक्षा दी जानी थी। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक बार गुणावगुण के आधार पर अपील का निर्णय हो जाने के बाद, उसमें धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा ।

6. दूसरी ओर राज्य के विद्वान वकील ने पारित आदेश का समर्थन किया ।

7. उड़ीसा राज्य बनाम राम चंदर अग्रवाल, ए.आइ.आर (1979) एससी 87 इसे पैराग्राफ 20 में इस प्रकार लिखा गया हैः

" .....यह निर्णय प्रत्यर्थी का समर्थन करने के बजाय स्पष्ट रूप से यू.

जे. एस. चोपड़ा बनाम बॉम्बे राज्य, एआइआर (1955) एससी 633

का अनुसरण करता है कि एक बार उच्च न्यायालय द्वारा अपने अपीलीय या पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करके निर्णय सुना दिया गया है, उस निर्णय के विरूद्ध कोई पुनर्विलोकन या पुनरीक्षण नही किया जा सकता क्योंकि दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसा प्रावधान नहीं है जो उच्च न्यायालय को इसके पुनर्विलोकन या पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने में सक्षम बनाता हो । संहिता की धारा 561 ए के प्रावधान को उस शक्ति के प्रयोग के लिए लागू नहीं किया जा सकता जो संहिता द्वारा विशेष रूप से निषिद्ध है।"

8. हरि सिंह मान बनाम हरभजन सिंह बाजवा और अन्य जे. टी. (2000) सप्लीमेंट 2 एस.सी. 394 की स्थिति को पैरा 10 में निम्नानुसार दोहराया गया थाः

"संहिता की धारा 362 यह आदेशित करती है कि जब किसी मामले को निपटाने के लिए न्यायालय द्वारा निर्णय या अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर कर दिए हैं तब लिपिकीय या गणितीय त्रुटि को ठीक करने के सिवाय उसमें को परिवर्तन नहीं करेगा या उसका पुनर्विलोकन नहीं करेगा। यह धारा कानून के इस विशिष्ट सिद्धांत पर आधारित है कि जब एक बार मामला किसी न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से निपटा दिया जाता है तो विशिष्ट वैधानिक प्रावधान के अभाव में वह पद कार्य से निवृत (*Functus officio*) बन जाता है तथा उसी अनुतोष के लिए नये आवेदन पर विचार करने का हकदार नहीं होगा, जबतक कि

पूर्व आदेश नहीं हो। एक सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय द्वारा अंतिम निपटान को विधि द्वारा निरधारित तरीके से रदद कर दिया जाता है । न्यायालय उस वक्त पद कार्य से निवृत (*Functus officio*) हो जाता है जब उसने मामले के निपटारे के आधिकारिक आदेश पर हस्ताक्षर कर दिए हैं । ऐसा आदेश सिवाय किसी लिपिकीय अथवा गणितीय त्रुटि को सुधारने की सीमा तक बदला नहीं जा सकता है।"

9. इस प्रकार उच्च न्यायालय ने इसे सही माना कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आवेदन खारिज किया जाना चाहिए।

10. जहां तक कि दूसरी अपील का संबंध है, यह ध्यान देने योग्य है कि एक विशिष्ट दलील अभियुक्त की आयु 18 वर्ष से कम होने की दी गयी थी।

अधिनियम की धारा 20 ए. ए. इस प्रकार हैः

"20 ए. ए.-अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (1958 का 20) में या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 360, के तहत अपराध के लिए दोषसिद्ध किए गए व्यक्ति पर लागू नहीं होगा जब तक कि वह व्यक्ति अठारह वर्ष से कम आयु का न हो ।"

11. इस प्रकार यदि अपीलार्थी यह दिखाने में सफल हो जाता है कि घटना की तारीख पर उसकी आयु 18 से कम थी तो धारा 20 एए की प्रयोज्यता पर विचार किया जाना चाहिए। यह दलील विशेष रूप से निचली न्यायालय के समक्ष नहीं ली गई थी और केवल कुछ दस्तावेज प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष पेश किए गए थे। निचली अदालत को इसकी जांच करने का अवसर नहीं मिला। प्रथम अपीलीय न्यायालय को याचिका में कोई सार नहीं मिला क्योंकि दस्तावेज साबित नहीं हुए थे। निष्कर्ष की अनिश्चितता के बारे में पुनरीक्षण याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष एक विशिष्ट दलील दी गई। यह एक ऐसा मामला है जिसमें अभियुक्त की आयु से संबंधित प्रश्न पर प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया था, चूंकि यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिसका विवाद के विषय पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है, इसलिए हम आयु से संबंधित याचिका की प्रयोज्यता पर विचार करने और कानून के अनुसार मामले पर नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हैं।

12. अपीलों का तदनुसार निपटारा किया जाता है।

अपीलों का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रेनू शकीत (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।